याकूब की पत्री

अध्याय 2

बुद्धि के दो मार्ग

Manuscript

thirdmill
Biblical Education. For the World. For Free.

© थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ 2021के द्वारा

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन के किसी भी भाग को प्रकाशक, थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़, इनकोरपोरेशन, 316, लाइव ओक्स बुलेवार्ड, कैसलबरी, फ्लोरिडा 32707 की लिखित अनुमति के बिना समीक्षा, टिप्पणी, या अध्ययन के उद्देश्यों के लिए संक्षिप्त उद्धरणों के अतिरिक्त किसी भी रूप में या किसी भी तरह के लाभ के लिए पुनः प्रकशित नहीं किया जा सकता।

पवित्रशास्त्र के सभी उद्धरण बाइबल सोसाइटी ऑफ़ इंडिया की हिन्दी की पवित्र बाइबल से लिए गए हैं। सर्वाधिकार © The Bible Society of India

थर्ड मिलेनियम के विषय में

1997 में स्थापित, थर्ड मिलेनियम एक लाभनिरपेक्ष सुसमाचारिक मसीही सेवकाई है जो पूरे संसार के लिए मुफ्त में बाइबल आधारित शिक्षा प्रदान करने के लिए प्रतिबद्ध है।

संसार के लिए मुफ़्त में बाइबल आधारित शिक्षा।

हमारा लक्ष्य संसार भर के हज़ारों पासवानों और मसीही अगुवों को मुफ़्त में मसीही शिक्षा प्रदान करना है जिन्हें सेवकाई के लिए पर्याप्त प्रशिक्षण प्राप्त नहीं हुआ है। हम इस लक्ष्य को अंग्रेजी, अरबी, मनडारिन, रूसी, और स्पैनिश भाषाओं में अद्वितीय मल्टीमीडिया सेमिनारी पाठ्यक्रम की रचना करने और उन्हें विश्व भर में वितरित करने के द्वारा पूरा कर रहे हैं। हमारे पाठयक्रम का अनुवाद सहभागी सेवकाइयों के द्वारा दर्जन भर से अधिक अन्य भाषाओं में भी किया जा रहा है। पाठ्यक्रम में ग्राफिक वीडियोस, लिखित निर्देश, और इंटरनेट संसाधन पाए जाते हैं। इसकी रचना ऐसे की गई है कि इसका प्रयोग ऑनलाइन और सामुदायिक अध्ययन दोनों संदर्भों में स्कूलों, समूहों, और व्यक्तिगत रूपों में किया जा सकता है।

वर्षों के प्रयासों से हमने अच्छी विषय-वस्तु और गुणवत्ता से परिपूर्ण पुरस्कार-प्राप्त मल्टीमीडिया अध्ययनों की रचना करने की बहुत ही किफ़ायती विधि को विकसित किया है। हमारे लेखक और संपादक धर्मवैज्ञानिक रूप से प्रशिक्षित शिक्षक हैं, हमारे अनुवादक धर्मवैज्ञानिक रूप से दक्ष हैं और लक्ष्य-भाषाओं के मातृभाषी हैं, और हमारे अध्यायों में संसार भर के सैकड़ों सम्मानित सेमिनारी प्रोफ़ेसरों और पासवानों के गहन विचार शामिल हैं। इसके अतिरिक्त हमारे ग्राफिक डिजाइनर, चित्रकार, और प्रोडयूसर्स अत्याधुनिक उपकरणों और तकनीकों का प्रयोग करने के द्वारा उत्पादन के उच्चतम स्तरों का पालन करते हैं।

अपने वितरण के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए थर्ड मिलेनियम ने कलीसियाओं, सेमिनारियों, बाइबल स्कूलों, मिशनरियों, मसीही प्रसारकों, सेटलाइट टेलीविजन प्रदाताओं, और अन्य संगठनों के साथ रणनीतिक सहभागिताएँ स्थापित की हैं। इन संबंधों के फलस्वरूप स्थानीय अगुवों, पासवानों, और सेमिनारी विद्यार्थियों तक अनेक विडियो अध्ययनों को पहुँचाया जा चुका है। हमारी वेबसाइट्स भी वितरण के माध्यम के रूप में कार्य करती हैं और हमारे अध्यायों के लिए अतिरिक्त सामग्रियों को भी प्रदान करती हैं, जिसमें ऐसे निर्देश भी शामिल हैं कि अपने शिक्षण समुदाय को कैसे आरंभ किया जाए।

थर्ड मिलेनियम a 501(c)(3) कारपोरेशन के रूप में IRS के द्वारा मान्यता प्राप्त है। हम आर्थिक रूप से कलीसियाओं, संस्थानों, व्यापारों और लोगों के उदार, टैक्स-डीडक्टीबल योगदानों पर आधारित हैं। हमारी सेवकाई के बारे में अधिक जानकारी के लिए, और यह जानने के लिए कि आप किस प्रकार इसमें सहभागी हो सकते हैं, कृपया हमारी वैबसाइट http://thirdmill.org को देखें।

विषय-वस्तु

परिचय 1
चिंतनशील ज्ञान 2
आवश्यकता 2
परीक्षाओं की चुनौती 2
कई प्रकार की परीक्षाएँ 3
मार्गदर्शन 5
परखा जाना 5
धीरज 6
परिपक्वता 6
पुरस्कार 7
विश्वास 8
व्यावहारिक ज्ञान 10
आवश्यकता 11
सांसारिक ज्ञान 12
स्वर्गीय ज्ञान 13
मार्गदर्शन 14
परमेश्वर की व्यवस्था का मापदंड 15
परमेश्वर की व्यवस्था की प्राथमिकताएँ 17
विश्वास 18
विश्वास और कर्म 19
विश्वास और धर्मी ठहराया जाना 20
उपसंहार 22

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

याकूब की पत्री

अध्याय दो

बुद्धि के दो मार्ग

परिचय

कभी न कभी हम सबने ऐसी चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों का सामना किया है जो दुविधा में डालनेवाली और निराश करनेवाली होती हैं। और उन परिस्थितियों में हमने अक्सर यह चाहा है कि हमें कोई ऐसा मित्र मिल जाए जो हमें समझ सके कि हमारे साथ क्या चल रहा है और हमें कुछ व्यावहारिक परामर्श दे सके। ऐसा मित्र बुद्धि का स्रोत होगा जो हमें बहुत आनंदित करेगा।

कई रूपों में, आरंभिक विश्वासियों के साथ कुछ ऐसा ही हुआ जिन्होंने नए नियम की याकूब की पत्री को पहले प्राप्त किया। उन्होंने ऐसी चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों का सामना किया जिन्होंने उनमें से बहुतों को दुविधा और निराशा में डाल दिया था। और याकूब ने उन्हें बुद्धि प्रदान करने के लिए पत्री लिखी। उसने उन्हें उनकी परिस्थितियों में परमेश्वर के *अच्छे* उद्देश्यों को स्मरण दिलाने के लिए लिखा। उसने उन्हें बताया कि परमेश्वर ने विश्वसनीय मार्गदर्शन दिया है जिसका उन्हें अनुसरण करना चाहिए। और उसने उन्हें आश्वस्त किया कि यदि वे परमेश्वर की बुद्धि को स्वीकार करेंगे, तो बड़े आनंद का अनुभव करेंगे।

यह *याकूब की पत्री* पर आधारित हमारी श्रृंखला का दूसरा अध्याय है, और यह याकूब के मुख्य, एक सूत्र में बाँधनेवाले विषयों में से एक पर ध्यान केंद्रित करता है। हमने इस अध्याय का शीर्षक “बुद्धि के दो मार्ग” दिया है, क्योंकि हम देखेंगे कि कैसे इस पुस्तक ने आरंभिक कलीसिया को परमेश्वर की ओर से दो प्रकार की बुद्धि प्रदान की। और, हम देखेंगे कि कैसे यह मसीह के वर्तमान अनुयायियों के रूप में हमें मार्गदर्शन प्रदान करती है।

अपने पिछले अध्याय में हमने देखा था कि याकूब की पत्री की सरंचना और विषय-वस्तु पहली सदी के जाने-पहचाने यहूदी बुद्धि साहित्य को दर्शाती है। और हमने इस पत्री के मूल उद्देश्य को इस प्रकार सारगर्भित किया था :

> **याकूब ने अपने पाठकों से परमेश्वर की ओर से मिलनेवाली बुद्धि को पाने को कहा ताकि उन्हें अपनी परीक्षाओं में आनंद प्राप्त हो।**

याकूब ने वास्तव में “बुद्धि” — यूनानी भाषा में सोफ़िया (σοφία) — और "बुद्धिमान" — यूनानी भाषा में सोफ़ोस (σοφός) — शब्दों का प्रयोग अपनी पत्री के केवल दो भागों में किया है। हम इन शब्दों को 1:2-18 में और फिर से 3:13-18 में पाते हैं। ये अनुच्छेद विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इनमें से प्रत्येक बुद्धि के दो में से एक मार्ग की ओर संकेत करता है जिनका अनुसरण करने के लिए याकूब ने अपने पाठकों को कहा था।

अब, हमें ध्यान रखना चाहिए कि जब कुछ लोग याकूब की पत्री में बुद्धि के बारे में सोचते हैं, तो वे सांसारिक ज्ञान और स्वर्गीय बुद्धि के बीच याकूब के द्वारा प्रकट अंतर के बारे में सोचते हैं। हम इस अध्याय में आगे इन दोनों प्रकार की बुद्धि की खोज करेंगे। परंतु हमारे उद्देश्यों के लिए हम यहूदी बुद्धि साहित्य की परंपरा में पाए जानेवाले बुद्धि के उन दो मुख्य मार्गों पर ध्यान कंद्रित करेंगे। पहला वह है जिसे हम “चिंतनशील ज्ञान” कह सकते हैं, और दूसरे को हम “व्यावहारिक ज्ञान” कहेंगे।

चिंतनशील ज्ञान सबसे स्पष्ट रूप में अय्यूब और सभोपदेशक जैसी पुस्तकों में पाया जाता है। ये पुस्तकें परीक्षाओं और कष्टों में परमेश्वर के उद्देश्यों को खोजती हैं। दूसरी ओर, व्यावहारिक ज्ञान बड़ी प्रमुखता से नीतिवचन की पुस्तक में पाया जाता है। यह प्रतिदिन के जीवन के लिए परामर्श और मार्गदर्शन देने के लिए समर्पित पुस्तक है।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

जब हम याकूब की पत्री में बुद्धि के इन दो मार्गों का अध्ययन कर रहे हैं, तो पहले हम चिंतनशील ज्ञान के मार्ग पर ध्यान देगें। और दूसरा, हम व्यावहारिक ज्ञान के मार्ग को देखेंगे। आइए चिंतनशील ज्ञान पर याकूब द्वारा दिए गए ध्यान के साथ आरंभ करें।

चिंतनशील ज्ञान

हम सबने ऐसी परिस्थितियों का सामना किया है जिन्हें हम सोचते हैं कि हम समझते हैं, पर बाद में हमें पता चलता है कि हम गलत थे। हमें यह देखने के लिए कि वास्तव में क्या हो रहा है, अक्सर सामान्य रूप से दिखनेवाली बातों से आगे देखना पड़ता है। कई रूपों में, याकूब ने अपनी पुस्तक के मुख्य भाग को ऐसे ही आरंभ किया। उसने अपने पाठकों को निराशा भरी परिस्थितियों से आगे बढ़कर देखने, और उन बातों से अंतर्दृष्टि प्राप्त करने को कहा जो उनके जीवनों में वास्तव में हो रही थीं।

हम अध्ययन करेंगे कि कैसे याकूब ने इस प्रकार के चिंतनशील ज्ञान को तीन रूपों में दर्शाया। पहला, हम उसके पाठकों की आवश्यकता पर ध्यान देंगे। दूसरा, हम उस मार्गदर्शन को देखेंगे जो याकूब ने उन्हें प्रदान किया। और तीसरा, हम चिंतनशील ज्ञान और विश्वास के बीच के संबंध पर ध्यान देंगे। आइए पहले हम याकूब के पाठकों की चिंतनशील ज्ञान की आवश्यकता को देखें।

आवश्यकता

अपने पिछले अध्याय में हमने देखा था कि इस पत्री के मूल पाठक मुख्य रूप से आरंभिक यहूदी मसीही थे। संभावित रूप से वे स्तिफनुस की शहादत के बाद यरूशलेम में आए बड़े सताव के कारण वहाँ से निकल जाने को मजबूर हो गए होंगे। और जो कुछ याकूब ने लिखा है उससे स्पष्ट है कि उनमें से बहुत से लोगों को निराशा और दुविधा की परिस्थितियों में सहायता की आवश्यता थी, जब वे उन स्थानों पर गंभीर परीक्षाओं का सामना कर रहे थे जहाँ वे तितर-बितर हो गए थे।

याकूब 1:2 में हम देख सकते हैं कि याकूब इन आवश्यकताओं को पहले से ही जानता था। अपने पत्र के सबसे पहले पद के ठीक बाद उसने यह लिखा :

> **हे मेरे भाइयो, जब तुम नाना प्रकार की परीक्षाओं में पड़ो, तो इसको पूरे आनंद की बात समझो (याकूब 1:2)।**

याकूब के पाठकों की आवश्यकता को समझने के लिए इस अनुच्छेद के दो आयामों को देखना सहायक होगा। पहला, हम परीक्षाओं की चुनौती को जाँचेंगे। और दूसरा, हम उन कई प्रकार की परीक्षाओं को देखेंगे जिनका सामना याकूब के पाठकों ने किया। आइए परीक्षाओं की चुनौती के साथ आरंभ करें।

परीक्षाओं की चुनौती

याकूब 1:2 में परीक्षाओं के रूप में अनूदित शब्द यूनानी संज्ञा *पेईरासमोस* (πειρασμός) है। इस शब्द का अनुवाद “परीक्षा,” “परख" और “परीक्षण” के रूप में किया जा सकता है। इसी प्रकार, इसके क्रिया-रूप *पेईराजो* (πειράζω) का अनुवाद “मुकदमा लड़ने,” “परीक्षा में डालने” और “परखने” के रूप में किया जा सकता है। इन संभावित अनुवादों की संभावनाओं को समझना उन परिस्थितियों को समझने में हमारी सहायता कर सकता है जिनका सामना इस पत्री के मूल पाठक कर रहे थे। वास्तव में, उन्होंने

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

कठिन *परीक्षाओं* का सामना किया, और ये परीक्षाएँ उनके *परखे जाने* के उद्देश्य के साथ उनके मार्ग में *परखों* को लेकर आईं।

दुखद रूप से, आधुनिक मसीही अक्सर उस बात के महत्व को कम कर देते हैं जो याकूब के मन में थी क्योंकि हम परीक्षाओं, परखों, और परीक्षणों को बिल्कुल अलग-अलग विचारों के रूप में देखते हैं। परंतु पवित्रशास्त्र, विशेष रूप से बुद्धि साहित्य जैसे अय्यूब की पुस्तक, इन अवधारणाओं को ऐसी चुनौतीपूर्ण परिस्थिति के पहलू के रूप में प्रस्तुत करती है जिसका सामना परमेश्वर के लोग करते हैं।

चुनौतीपूर्ण परिस्थितियाँ परीक्षाएँ होती हैं क्योंकि वे कठिन होती हैं और उनमें धीरज की आवश्यकता होती है। परंतु ऐसी परिस्थितियाँ नैतिक रूप से तटस्थ नहीं होतीं। वे गलत या पापपूर्ण रूपों में प्रतिक्रिया देने की परीक्षाएँ हैं। और चुनौतीपूर्ण परिस्थितियाँ परमेश्वर की ओर से परखा जाना भी होती हैं। वे ऐसे माध्यम हैं जिनके द्वारा परमेश्वर हमारे मनों की दशा को परखता और प्रमाणित करता है।

परीक्षाओं की चुनौती के फलस्वरूप उत्पन्न आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए, हमें यह भी देखना चाहिए कि पद 1:2 में याकूब ने कई प्रकार की परीक्षाओं का उल्लेख किया है।

कई प्रकार की परीक्षाएँ

जब याकूब ने कई प्रकार की परीक्षाओं की बात की, तो उसने उन कई कठिनाओं की ओर संकेत किया जिनमें आरंभिक कलीसिया में गरीब और धनवान विश्वासियों के बीच अशांति और विवाद सम्मिलित थे।

एक ओर, याकूब ने गरीब विश्वासियों द्वारा सामना की जानेवाली चुनौतियों के बारे में बहुत कुछ लिखा। प्रेरितों के काम 2-6 के अनुसार यरूशलेम की आरंभिक कलीसिया में बहुत से गरीब लोग थे। और क्योंकि याकूब ने उन विश्वासियों को पत्र लिखा जो सताव के कारण यरूशलेम से चारों ओर तितर-बितर हो गए थे, इसलिए हो सकता है कि गरीबों की सँख्या बढ़ गई हो।

1:9 और 4:6 में याकूब ने इन मसीहियों को "दीन" या यूनानी में *टापेईनोस* (ταπεινός) कहा। इस शब्द का अर्थ "सामाजिक रूप से निम्न स्तर" का होना है। पद 2:2, 3, 5 और 6 में उसने उन्हें "कंगाल" या यूनानी में *टोखोस* (πτωχός) भी कहा। इस शब्द का अर्थ "आर्थिक रूप से निर्बल" है। पद 1:27 में उसने "अनाथों और विधवाओं" का उल्लेख किया। पवित्रशास्त्र अक्सर इस समूह की पहचान गरीबी और दुर्व्यवहार को सहनेवाले एक विशेष समूह के रूप में करता है। पद 2:2 में याकूब ने संकेत दिया कि इनमें से कुछ गरीब विश्वासी "मैले कुचैले कपड़े" पहनते थे। और पद 2:15 के अनुसार इनमें से कुछ इतने गरीब थे कि वे "नंगे उघाड़े और प्रतिदिन के भोजन की घटी" के साथ थे।

> याकूब कंगालों पर बहुत बल देता है। यह अनुमान लगाने के द्वारा याकूब की बातों को साधारण रूप से बस ऐसे ही समझ लेना आसान है कि वह तो आत्मा में कंगाल होने की बात कर रहा है। उसका निश्चित रूप से यही अर्थ था कि हमें दीन होना चाहिए, हमें आत्मा में दीन होना चाहिए, परंतु वह तो भौतिक रूप से कंगालों की आवश्यकताओं और परिस्थितियों को संबोधित कर रहा है। यह लूका के धन्य वचन के अनुरूप है, "धन्य हो तुम जो दीन हो।" और याकूब का संकेत भौतिक और आर्थिक रूप से कंगाल लोगों की ओर है। वे ही विशेष रूप से धन्य क्यों हैं? इसका संबंध परमेश्वर के राज्य के कार्य करने के तरीके से है। परमेश्वर के राज्य का कार्य निर्बल को उठाना और शक्तिशाली को दीन करना है। आप इसे इस जीवन में कर सकते हैं। यदि आप धनी हैं, यदि आप सामर्थी हैं, यदि आप प्रभावशाली हैं, तो आप स्वयं को दीन कर सकते हैं। याकूब का लक्ष्य दीनता, गरीबी के भाव को उत्पन्न करने, अर्थात् आत्मा में दीन बनने का है। परंतु यह ऐसे

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

> लोगों के बारे में भी बहुत कुछ कहता है जो वास्तव में कंगाल हैं, कि तुम्हारा धन स्वर्ग में है, कि तुम्हारा राज्य स्वर्ग में है, कि तुम्हारा प्रतिफल, तुम्हारे सब स्रोत अपने चरित्र में स्वर्गीय हैं। और इसलिए एक बड़ा युगांत प्रतिलोम आने वाला है, ऐसा जो निर्बल को सामर्थी बना देगा — परमेश्वर बचे हुओं को एकत्र करेगा, वह बीमारों को एकत्र करेगा, वह कंगालों को एकत्र करेगा, और वह उन्हें अपने राज्य में शिरोमणि बनाएगा — अर्थात् ऐसा जो घमंडी की शक्ति को क्षीण करेगा।
>
> — डॉ. थॉमस एल. कीने

याकूब ने ऐसी कई विशेष चुनौतियों का उल्लेख किया जिसका सामना कलीसिया में दीन और गरीब लोग कर रहे थे। इनमें से कुछ ये हैं, पद 1:9 में उसने ध्यान दिया कि उनमें से कुछ आत्म-निंदा की परीक्षा में डाले गए। वे अनंत उद्धार की महिमा के लिए परमेश्वर के चुने हुए होने के रूप में "अपने ऊँचे पद पर घमंड" करने में असफल रहे थे। पद 3:9 के अनुसार उनकी परिस्थितियों ने अक्सर उन्हें दूसरों को शाप देने की परीक्षा में डाला, ऐसे समय पर भी जब वे परमेश्वर को सम्मान देने की बात करते थे। पद 3:14 में याकूब ने चेतावनी दी कि कुछ दूसरों के प्रति "कड़वी डाह रखने" और स्वार्थी महत्वकांक्षा से भरने की परीक्षा में पड़े हुए थे। फलस्वरूप, पद 4:1 कलीसिया के भीतर की लड़ाइयों और झगड़ों में पड़ने की परीक्षा को संबोधित करता है। और 5:7 में याकूब ने कंगालों को प्रभु के पुनरागमन की प्रतीक्षा धीरज के साथ करने की सलाह देने के द्वारा अधीरता से बचने की चुनौती दी।

दूसरी ओर, धनी विश्वासियों ने भी परीक्षाओं का सामना किया। प्रेरितों के काम 2-6 के अनुसार यरूशलेम की कलीसिया में कुछ लोगों के पास इतना धन था कि वे मसीह में अपने गरीब भाइयों और बहनों की देखभाल कर सकते थे। और स्पष्ट है कि चाहे वे सताव के कारण तितर-बितर हो गए थे, फिर भी कलीसिया में ऐसे बहुत से लोग थे जिन्हें धनी समझा जाता था।

याकूब ने इन धनी विश्वासियों का वर्णन कई रूपों में किया है। पद 1:10, 2:6 और 5:1 में याकूब ने उनका उल्लेख "धनवान" या यूनानी में *प्लूसिओस* (πλούσιος) कहा है। यह समाज के उच्च वर्ग के लोगों के लिए एक सामान्य शब्द था। पद 2:6 के अनुसार उनका सामाजिक स्तर इतना उँचा था कि वे दूसरों को लगातार कचहरियों में घसीटते रहते थे। पद 4:13 हमें बताता है कि वे धन कमाने के लिए व्यापारिक यात्राओं में जाते रहते थे। पद 5:2-3 दर्शाते हैं कि वे अपने वस्त्रों और सोने-चाँदी पर घमंड किया करते थे। और पद 5:5 में उनमें से कुछ का विवरण भोग-विलास करने और सुख भोगनेवालों के रूप में किया जा सकता है।

याकूब जानता था कि धन अपनी ही चुनौतियाँ लेकर आता है। पद 1:10 के अनुसार धनवान पश्चातापी पापियों के रूप में प्राप्त दीनता को भूलकर अपने पर घमंड करने की परीक्षा में पड़ गए थे। पद 1:27 हमें बताता है कि उनके धन ने उन्हें संसार के द्वारा भ्रष्ट बनने की परीक्षा में डाल दिया था। पद 2:7 संकेत देता है कि वे कचहरी में झूठी गवाही देने के कारण परमेश्वर की निंदा करने की परीक्षा में पड़ गए थे। पद 2:16 में याकूब ने कहा कि उनकी प्रवृत्ति कंगालों के लिए कुछ भी नहीं करने की थी। पद 3:9 के अनुसार वे परमेश्वर को आदर देने का दिखावा करते हुए गरीबों के साथ-साथ अन्य लोगों को शाप देते थे। पद 3:14 में हम देखते हैं कि उन्होंने अपने ही प्रकार की कड़वी डाह और स्वार्थी महत्वकांक्षा को अपने मन में भरे रखा। पद 4:1 के अनुसार वे लड़ाइयों और झगड़ों लगे रहे। पद 4:13-16 हमें बताते हैं कि वे ऐसा जीवन जीने की परीक्षा में पड़ गए कि मानो वे परमेश्वर से स्वतंत्र हों। और 5:3 उल्लेख करता है कि उन्होंने धन का संचय किया।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

स्पष्ट है कि याकूब के पाठकों में धनवान और कंगाल दोनों प्रकार के विश्वासियों ने कई प्रकार की चुनौतियों का सामना किया। और दोनों को ही उस बुद्धि की आवश्यकता थी जो याकूब ने इस पत्री में प्रदान की है।

अब जबकि हमने यह देख लिया है कि कैसे चिंतनशील ज्ञान के प्रति याकूब का ध्यान उस आवश्यकता से प्रेरित है जिसकी रचना उन परीक्षाओं के द्वारा हुई जिनका सामना उसके पाठकों ने किया था, इसलिए हमें दूसरे विषय की ओर मुड़ना चाहिए : याकूब ने उन परीक्षाओं में कैसे मार्गदर्शन प्रदान किया।

मार्गदर्शन

मसीह के अनुयायी होने के रूप में हम अपने प्रतिदिन के अनुभवों के द्वारा ही मसीही धर्मविज्ञान के कई पहलूओं को समझ सकते हैं। परंतु अन्य मसीही शिक्षाएँ इतनी सरल नहीं हैं। यदि हम अपने अनुभवों के परदे के पीछे जाकर परमेश्वर के गुप्त उद्देश्यों की गहरी समझ को प्राप्त करना चाहते हैं, तो हमें मार्गदर्शन की आवश्यकता है। और याकूब ने चिंतनशील ज्ञान, अर्थात् ऐसी योग्यता को प्राप्त करने में हमारी सहायता के लिए गहरी अंतर्दृष्टियों को प्रदान किया कि हम अपने जीवनों की चुनौतियों और परीक्षाओं के पीछे के परमेश्वर के उद्देश्यों को समझ लें। याकूब 1:3-4 और उस तरीके को सुनिए जिसमें याकूब ने उन अंतर्दृष्टियों का वर्णन किया जिन्हें वह अपने पाठकों में देखना चाहता था :

> **यह जानकर कि तुम्हारे विश्वास के परखे जाने से धीरज उत्पन्न होता है। पर धीरज को अपना पूरा काम करने दो कि तुम पूरे और सिद्ध हो जाओ, और तुम में किसी बात की घटी न रहे (याकूब 1:3-4)।**

इस अनुच्छेद में याकूब के मार्गदर्शन को कई रूपों में सारगर्भित किया जा सकता है, परंतु अपने उद्देश्यों के लिए हम चार बातों पर अपना ध्यान लगाएँगे। पहली, याकूब ने कहा कि उनकी चुनौतीपूर्ण परिस्थितियाँ उनके विश्वास को परख रही थीं।

परखा जाना

जब याकूब ने अपने पाठकों की चुनौतियों का वर्णन "उनके विश्वास के परखे जाने" के रूप में किया, तो उसने यूनानी शब्द *डोकीमीओन* (δοκίμιον) का प्रयोग किया। इस शब्द का अर्थ किसी बात की सच्चाई को निर्धारित करने या सिद्ध करने के अर्थ में "परखा जाना" है। इस विषय में, याकूब के मन में उनके विश्वास की सच्चाई को प्रमाणित करना था।

वास्तव में, याकूब ने स्पष्ट किया कि उसके पाठकों द्वारा सही जानेवाली कई प्रकार की परीक्षाओं में परमेश्वर का उद्देश्य उनके मनों की सच्ची दशा को जानना था। उनके "परखे जाने" ने इस बात की पुष्टि कर दी कि उनका विश्वास सच्चा था या नहीं। परीक्षाओं के पीछे परमेश्वर के उद्देश्य का यह दृष्टिकोण याकूब के लिए कोई नया नहीं था। यह पुराने और नए नियम में बहुत बार पाया जाता है। उदाहरण के लिए, व्यवस्थाविवरण 8:2 में मूसा ने इस्राएल के लोगों से यह कहा था :

> **स्मरण रख कि तेरा परमेश्वर यहोवा उन चालीस वर्षों में तुझे सारे जंगल के मार्ग में से इसलिए ले आया है, कि वह तुझे नम्र बनाए, और तेरी परीक्षा करके यह जान ले कि तेरे मन में क्या है, और कि तू उसकी आज्ञाओं का पालन करेगा या नहीं (व्यवस्थाविवरण 8:2)।**

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

शेष पवित्रशास्त्र से यह स्पष्ट है कि परमेश्वर लोगों के मनों सहित सब कुछ जानता है। परंतु यह और ऐसे ही अन्य अनुच्छेद बाइबल के सत्य को दर्शाते हैं कि जब परमेश्वर इतिहास में लोगों के साथ संबंध स्थापित करता है, तो वह अक्सर उनके मन की बातों को जानने या प्रकट करने के लिए कठिनाईयों का प्रयोग करता है।

जब याकूब ने मार्गदर्शन प्रदान किया तो उसने न केवल यह स्थापित किया उसके पाठकों की चुनौतियाँ उनके विश्वास को परखें, बल्कि उसने यह भी दर्शाया कि उनकी परीक्षाएँ धीरज को उत्पन्न करने के लिए रची गई थीं।

धीरज

याकूब ने यूनानी भाषा के शब्द *हुपोमोने* (ὑπομονή) का प्रयोग करते हुए लिखा कि परखे जाने से धीरज उत्पन्न होता है। हिंदी के हमारे शब्द "धीरज" के समान ही, *हुपोमोने* का अर्थ कठिनाई के समय संयम रखना है। अतः याकूब ने स्पष्ट किया कि परीक्षाओं ने परमेश्वर के लोगों को धीरज धरने तथा मसीह के प्रति विश्वासयोग्य भक्ति में बने रहने के लिए सक्षम बनाने के द्वारा विश्वास को प्रमाणित किया।

सामान्य रूपों में मसीही धीरज पर आधारित नए नियम की शिक्षाएँ द्विभागी हैं। एक ओर, धीरज परमेश्वर के अनुग्रह का वरदान है। रोमियों 6:1-14 जैसे अनुच्छेद हमें सिखाते हैं कि मसीह के अनुयायी अपने विश्वास में धीरज धर सकते हैं क्योंकि पवित्र आत्मा, जिसने यीशु को नए जीवन के लिए जिलाया, हमें जीवन की नवीनता और विश्वासयोग्य आज्ञाकारिता में चलने के लिए सक्षम बनाता है। इसलिए यद्यपि धीरज धरने में मानवीय प्रयास की आवश्यकता होती है, फिर भी हमें स्मरण रखना चाहिए कि हम केवल हमारे भीतर परमेश्वर के लगातार कार्यरत अनुग्रह के द्वारा ही धीरज धर सकते हैं।

परंतु दूसरी ओर, नया नियम यह भी स्पष्ट करता है कि धीरज अनंत उद्धार के लिए आवश्यक है। दूसरे शब्दों में, जो उद्धार देनेवाले विश्वास को कार्य में लाते हैं, वे अपने विश्वास में अवश्य धीरज धरेंगे। कुलुस्सियों 1:22-23 में पौलुस के शब्दों को सुनिए :

> उसने [परमेश्वर ने] अब उसकी शारीरिक देह में मृत्यु के द्वारा तुम्हारा भी मेल कर लिया ताकि तुम्हें अपने सम्मुख पवित्र और निष्कलंक बनाकर सुरक्षित उपस्थित करे... यदि तुम विश्वास की नींव पर दृढ़ बने रहो और सुसमाचार की आशा को जिसे तुम ने सुना है, न छोड़ों (कुलुस्सियों 1:22-23)।

यहाँ पर पौलुस ने पुष्टि की कि कुलुस्सियों के मसीहियों का परमेश्वर से मेल-मिलाप हो गया था। परंतु वे इसकी सच्चाई के प्रति तभी आश्वस्त हो सकते थे यदि वे अपने विश्वास में बने रहें। धीरज धरने की मांग परमेश्वर के अनुग्रह के द्वारा उद्धार के संदेश के विपरीत नहीं थी। इसकी अपेक्षा, यह तो सुसमाचार में प्रकट आशा थी।

अपने मार्गदर्शन में याकूब ने न केवल उस विश्वास के परखे जाने पर चर्चा की जो धीरज को उत्पन्न करता है, बल्कि उसने उस परिपक्वता के बारे में भी बात की जो धीरज के फलस्वरूप मिलती है।

परिपक्वता

> याकूब की पत्री संपूर्ण रूप से मसीही परिपक्वता के बारे में है। कुछ लोग इसे पढ़कर सोच सकते हैं कि यह पुस्तक रुढ़िवाद के विषय में है; यह नियमों के विषय में है; यह ठीक उन बातों के विषय में है जो मुझे करने चाहिए। परंतु यह वास्तव में ऐसी पुस्तक है जिसका उद्देश्य एक मसीही के रूप में आपको बढ़ाना है, विशेषकर एक ऐसे मसीही के रूप में जो सब प्रकार के कठिन सामाजिक संदर्भों में जीवन बिताता है। कलीसिया रहने के लिए एक कठिन स्थान हो सकता

> है; याकूब इस बात को स्वीकार करता है। और आपको इस संसार और कलीसिया में रहने, इस संसार और कलीसिया में समृद्ध बनने के लिए परिपक्वता की जरूरत होती है; आपको सिद्ध और पूर्ण बनने की आवश्यकता है। और याकूब आपको वास्तव में बताता है कि यह कैसे करना है, परिपक्व बनने के इस जीवन को कैसे जीना है, उस बात के लिए कैसे तैयार रहना है जो कुछ संसार, शैतान, और शरीर आपके मार्ग में फेंकने का प्रयास करता है। और यह शुरू होता है, याकूब के बारे में यह बात रोचक है कि यह वास्तव में दुःख के साथ शुरू होता है। दुःख एक अग्नि-परीक्षा है; यह संदर्भ है; यह वह व्यायामशाला है जिसमें मसीही परिपक्वता उत्पन्न होती है। यहीं आपका विश्वास उत्पन्न होता और बढ़ता है और आने वाली बातों के लिए तैयार होता है। जब आप दुखों, परीक्षाओं, और परखे जाने को सहन करते हैं, और उनमें से निकल जाते हैं, तो आपका विश्वास आत्मा के द्वारा वचन में कार्य करते हुए मसीह और उसकी व्यवस्था और उसके ज्ञान के माध्यम से बढ़ता, सामर्थी बनता और आने वाली परीक्षाओं के लिए तैयार हो जाता है।
>
> — डॉ. थॉमस एल. कीने

एक बार फिर सुनिए जो याकूब ने 1:4 में लिखा है :

> पर धीरज को अपना पूरा काम करने दो कि तुम पूरे और सिद्ध हो जाओ, और तुम में किसी बात की घटी न रहे (याकूब 1:4)।

क्योंकि परीक्षाएँ और धीरज परिपक्वता उत्पन्न करते हैं, इसलिए याकूब ने अपने पाठकों से कहा कि धीरज को अपना पूरा कार्य करने दो। धीरज उन्हें पूर्ण और सिद्ध बनाएगा, और उनमें किसी बात की घटी न होगी।

अब हमें यहाँ सावधान रहना होगा। याकूब का अर्थ पूर्णता या किसी बात की घटी न होने से यह नहीं था कि हम इस जीवन में नैतिक सिद्धता तक पहुँच सकते हैं। हम 1 यूहन्ना 1:8 जैसे अनुच्छेदों से जानते हैं कि “यदि हम कहें कि हम में कुछ भी पाप नहीं, तो अपने आप को धोखा देते हैं, और हम में सत्य नहीं।” परंतु याकूब के मन में यह बात भी थी कि हम परमेश्वर की आज्ञाकारिता में निरंतर बढ़ते रहेंगे, और मसीह के आगमन पर जब न्याय होगा तो हमारे जीवनों में ऐसी कोई घटी नहीं होगी कि हम अयोग्य ठहराए जाएँ।

परखे जाने, धीरज धरने और परिपक्वता के संबंध में मार्गदर्शन देने के बाद याकूब ने दर्शाया कि इस प्रक्रिया के अंत में एक बड़ा पुरस्कार रखा होगा।

पुरस्कार

उसने इस पुरस्कार का उल्लेख पद 1:12 में किया जब उसने ऐसा कहा :

> धन्य है वह मनुष्य जो परीक्षा में स्थिर रहता है, क्योंकि वह खरा निकलकर जीवन का वह मुकुट पाएगा जिसकी प्रतिज्ञा प्रभु ने अपने प्रेम करनेवालों से की है (याकूब 1:12)।

जैसे कि याकूब ने यहाँ स्पष्ट किया, प्रत्येक व्यक्ति जो परीक्षा में धीरज धरता है वह परख में खरा उतरता है। और वह जीवन का मुकुट, अर्थात् परमेश्वर के महिमामय राज्य में अनंत जीवन का मुकुट

पाएगा जिसकी प्रतिज्ञा प्रभु ने उनसे की है जो उससे प्रेम करते हैं। इन सब दृष्टिकोणों को एक साथ लाते हुए याकूब ने अपने पाठकों को गहरा चिंतनशील ज्ञान प्रदान किया। उसने उन्हें उन परीक्षाओं को समझने का मार्गदर्शन दिया जिनका वे सामना कर रहे थे। वास्तव में, प्रत्येक परीक्षा परमेश्वर का दान थी, जिसकी रचना उनकी अनंत भलाई के लिए की गई थी।

> याकूब अपनी पत्री के आरंभ से ही जो बात कहता है, और जो विषय पूरी पत्री में पाया जाता है वह है, दुखों में धीरज धरने का महत्व। और जो वह कहता है, वास्तव में वही मसीही परिपक्वता की ओर लेकर जाता है। अध्याय 1 के आरंभ में वह कहता है, "हे मेरे भाइयो, जब तुम नाना प्रकार की परीक्षाओं में पड़ो, तो इसको पूरे आनन्द की बात समझो।" और तब वह बताता है कि क्यों : क्योंकि तुम जानते हो कि "विश्वास के परखे जाने से धीरज उत्पन्न होता है।" और फिर वह आगे बढ़ता है : "धीरज को अपना पूरा काम करने दो कि तुम पूरे और सिद्ध हो जाओ, और तुम में किसी बात की घटी न रहे।" अतः हम शायद यह सोचें कि दुखों का होना परमेश्वर के हमारे साथ न होने का चिह्न है, परंतु याकूब दुखों को ऐसे चिह्न के रूप में देखता है कि परमेश्वर कार्य करने जा रहा है, न केवल दुखों के कारण, बल्कि हमारे दुखों के माध्यम से ताकि वह हमें वह बनाए जो वह हमें बनाना चाहता है। और यहीं हम वास्तव में परिपक्वता में बढ़ते हैं। वह पद 1:12 में आगे यह कहता है, "धन्य है वह मनुष्य जो परीक्षा में स्थिर रहता है, क्योंकि वह खरा निकलकर जीवन का वह मुकुट पाएगा जिसकी प्रतिज्ञा प्रभु ने अपने प्रेम करनेवालों से की है।" इस प्रकार वह हमें दुखों के बारे में सोचने के लिए एक अलग आयाम प्रदान करता है। यह कुछ ऐसा है जिसे वास्तव में अनदेखा नहीं किया जाना चाहिए, न ही इसे खोजा जाना चाहिए, परंतु हमारी संस्कृति में हम दुखों से बचने को ही सफलता मानते हैं, परंतु यहाँ वह इसका वर्णन बढ़ने के एक अवसर के रूप में करता है। यह वह कुल्हिया है जिसमें मसीही परिपक्वता तैयार होती है।
>
> — रेव्ह. डॉ. थुरमन विलियम्स

चिंतनशील ज्ञान पर याकूब के ध्यान ने परीक्षा की परिस्थितियों में उसके पाठकों की आवश्यकताओं को संबोधित किया। इसने उन्हें मार्गदर्शन भी प्राप्त किया। परंतु आइए अब हम देखें कि कैसे चिंतनशील ज्ञान का मार्ग विश्वास की मांग करता है।

विश्वास

जब आप इसके बारे में सोचते हैं, तो जो अंतर्दृष्टियाँ याकूब ने परीक्षाओं के दौरान अपने पाठकों को दीं वे आम मसीही शिक्षाएँ थीं। परंतु हम सब जानते हैं कि जब परेशानियाँ हमारे जीवनों में आती हैं, तो हम इतने निराश हो जाते हैं कि हमारे लिए मूल मसीही मान्यताओं को थामे रखना भी कठिन हो जाता है। और स्पष्ट है कि याकूब को भी डर था कि उसके पाठकों के साथ भी ऐसा ही हुआ होगा। इसलिए उसने तुरंत संकेत दिया कि जो अंतर्दृष्टियाँ उसने उन्हें दीं हैं उन्हें अपनाने के लिए उन्हें विश्वास में परमेश्वर की ओर मुड़ना होगा। याकूब 1:5 में हम इन शब्दों को पढ़ते हैं :

> पर यदि तुम में से किसी को बुद्धि की घटी हो तो परमेश्वर से माँगे, जो बिना उलाहना दिए सब को उदारता से देता है, और उसको दी जाएगी। (याकूब 1:5)।

याकूब जानता था कि यदि हमें परीक्षाओं में परमेश्वर के अक्सर छिपे उद्देश्यों को समझने के लिए बुद्धि चाहिए तो हमें उसे परमेश्वर से माँगना होगा। परंतु इसके बाद 1:6-8 में याकूब ने बुद्धि के लिए प्रार्थना को विश्वास के साथ जोड़ा जब उसने यह कहा :

> **पर विश्वास से माँगे, और कुछ सन्देह न करे, क्योंकि सन्देह करनेवाला . . . यह न समझे कि मुझे प्रभु से कुछ मिलेगा, वह व्यक्ति दुचित्ता है और अपनी सारी बातों में चंचल है (याकूब 1:6-8)।**

जैसा कि हम यहाँ देखते हैं, याकूब ने आग्रह किया कि बुद्धि के लिए प्रार्थना विश्वास के साथ की जाए। अन्यथा हम दुचित्ते लोग होंगे।

दुखद रूप से, बहुत से अच्छे मसीहियों ने विश्वास के साथ मांगने और दुचित्ते न होने के याकूब के निर्देशों को गलत रीति से समझा है। वे सोचते हैं कि याकूब का संकेत हमारी विशेष प्रार्थना की विनतियों में भरोसा रखने की ओर है। अक्सर, मसीही के अनुयायी मानते हैं कि यदि हमारे पास बस पर्याप्त विश्वास हो, तो परमेश्वर हमारी प्रार्थनाओं का उत्तर वैसे देगा जैसे हम चाहते हैं। परंतु याकूब के कहने का अर्थ यह नहीं था। याकूब के लिए, "विश्वास से" मांगने का अर्थ "परमेश्वर के प्रति विश्वासयोग्य" होना था। हम यह जानते हैं क्योंकि याकूब ने "विश्वास से" मांगने के विलोम के रूप में "दुचित्ते" को दर्शाया है। और याकूब के लिए दुचित्ते के होने का अर्थ परमेश्वर के विरुद्ध गंभीर विद्रोह करना था। याकूब 4:8-9 और उस तरीके को सुनिए जिसमें याकूब ने दुचित्ते लोगों के बारे में कहा है :

> **हे पापियो, अपने हाथ शुद्ध करो; और हे दुचित्ते लोगो, अपने हृदय को पवित्र करो। दुःखी हो, और शोक करो, और रोओ। तुम्हारी हँसी शोक में और तुम्हारा आनन्द उदासी में बदल जाए (याकूब 4:8-9)।**

यहाँ पर ध्यान दें कि दुचित्ते लोग केवल वही नहीं हैं जो प्रार्थना करते समय भरोसा नहीं रख पाते। वे ऐसे पापी हैं जिन्हें अपने मनों को शुद्ध करना जरुरी है। उनकी अविश्वासयोग्यता इतनी गंभीर है कि उनके लिए शोक करना और दुखी होना उचित है।

अतः याकूब की पत्री के संदर्भ में उसके मन में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं था जिसमें केवल इस भरोसे की कमी है कि परमेश्वर उसकी प्रार्थना का उत्तर देगा। उसके मन में परमेश्वर की भलाई के प्रति एक मौलिक इनकार था। स्पष्ट है कि याकूब के पाठकों में से कुछ ने अपनी विफलता का दोष परमेश्वर पर लगाया था। उन्होंने तर्क दिया था कि परमेश्वर ने उन पर परीक्षाओं को डाला था, इसलिए परमेश्वर बुरा है क्योंकि वह उन्हें पाप करने की परीक्षा में डाल रहा था। परमेश्वर के विरूद्ध इस तरह के खुल्लमखुल्ला विद्रोह का वर्णन याकूब "दुचित्ते" के रूप में कर रहा था। याकूब 1:13-14 को सुनिए जहाँ याकूब ने इस गंभीर गलत धारणा को संबोधित किया :

> **जब किसी की परीक्षा हो, तो वह यह न कहे कि मेरी परीक्षा परमेश्वर की ओर से होती है; क्योंकि न तो बुरी बातों से परमेश्वर की परीक्षा हो सकती है, और न वह किसी की परीक्षा आप करता है। परन्तु प्रत्येक व्यक्ति अपनी ही अभिलाषा से खिंचकर और फँसकर परीक्षा में पड़ता है (याकूब 1:13-14)।**

इस बात पर ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि यहाँ "परीक्षा" के रूप में अनूदित शब्द यूनानी क्रिया *पेईराज़ो* (πειράζω) है, अर्थात् वही शब्द जिसका अनुवाद 1:2 में "परख" के लिए किया गया था। परंतु याकूब बल देता है कि परमेश्वर आप किसी को परीक्षा में नहीं डालता। यह अनुवाद उचित रूप से यूनानी सर्वनाम *आऊटोस* (αὐτός) या "आप" के बलपूर्ण प्रयोग को दर्शाता है। यह केवल यही नहीं कहता कि

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

परमेश्वर “किसी को परीक्षा में नहीं डालता” — या नहीं परखता। यह शाब्दिक रूप से कहता है, “न [परमेश्वर] किसी की परीक्षा *आप* करता है।”

जैसा कि हम अय्यूब की पुस्तक के पहले अध्याय से सीखते हैं, परमेश्वर सभी परीक्षाओं, परखों और परीक्षणों को वश में रखता है। परंतु स्वर्गीय न्यायलय के दृश्य में यह स्पष्ट हो जाता है कि अय्यूब की परीक्षा में परमेश्वर का उद्देश्य अय्यूब की हानि नहीं बल्कि उसकी भलाई था। परमेश्वर ने नहीं, बल्कि शैतान ने अय्यूब की परख का प्रयोग उसे पाप की परीक्षा में डालने के लिए किया।

इसलिए बुद्धि के लिए प्रार्थना करना और दुचित्ते न होने का अर्थ बाइबल की एक मूल शिक्षा, अर्थात् परमेश्वर की भलाई की पुष्टि करना है। जब हम परमेश्वर से परीक्षा की परिस्थितियों में बुद्धि को मांगते हैं तो हमें परमेश्वर की भलाई पर संदेह नहीं करना चाहिए। अन्यथा, हमारे पास इस बात पर विश्वास करने का कोई कारण नहीं होगा कि परमेश्वर हमें बुद्धि देगा। जैसे कि याकूब 1:17 में लिखता है :

> **क्योंकि हर एक अच्छा वरदान और हर एक उत्तम दान ऊपर ही से है, और ज्योतियों के पिता की ओर से मिलता है, जिसमें न तो कोई परिवर्तन हो सकता है, और न अदल बदल के कारण उस पर छाया पड़ती है (याकूब 1:17)।**

परमेश्वर "ज्योतियों का पिता" है। वह केवल “अच्छा” और “उत्तम” दान ही देता है। इसलिए हमारी परीक्षा में उसका उद्देश्य सदैव अच्छा और उत्तम ही होता है। यह हमारे विश्वास का दृढ़ समर्पण होना चाहिए जब हम चिंतनशील ज्ञान के मार्ग पर चलते हैं।

याकूब में पाए जानेवाले ज्ञान के दो मार्गों के हमारे अध्ययन में हमने चिंतनशील ज्ञान पर याकूब के केंद्र के विषय में चर्चा कर ली है। अब हम अपने दूसरे विषय की ओर मुड़ने के लिए तैयार हैं : व्यावहारिक ज्ञान। नए नियम की यह पुस्तक ज्ञान को व्यवहार में लागू करने के बारे में क्या कहती है?

व्यावहारिक ज्ञान

कभी न कभी हम सब की भेंट ऐसे लोगों से हुई होगी जो बहुत ज्ञानवान हों। वे ऐसी कई बातों से सबको प्रभावित कर देते हैं जो अन्य लोग नहीं जानते। परंतु कई बार, यही लोग व्यावहारिक जीवन के बारे में अधिक नहीं जानते। वे नहीं जानते हैं कि कैसे अपनी अंतर्दृष्टियों को सही कार्यों और व्यवहार में ढालें। कई रूपों में, याकूब ने इस पुस्तक में इस समस्या को संबोधित किया है। जैसा कि हमने देखा है, उसने अपनी पत्री को *चिंतनशील* ज्ञान पर बल देने के साथ आरंभ किया। वह जानता था कि उन परीक्षाओं में परमेश्वर के छिपे हुए उद्देश्यों की अंतर्दृष्टियों को प्राप्त करना कितना महत्वपूर्ण है, जिनका हम सामना करते हैं। परंतु उसने *व्यावहारिक* ज्ञान पर भी बल दिया — इस ज्ञान को ऐसे कार्यों और स्वभावों में ढालने की क्षमता जिनसे परमेश्वर प्रसन्न होता है।

सरल रूप में कहें तो, हम ऐसे रूपों में व्यावहारिक ज्ञान का अध्ययन करेंगे जो हमारी पहले की चर्चा के समान हों। पहला, हम व्यावहारिक ज्ञान की आवश्यकता को देखेंगे। दूसरा, हम ध्यान देंगे कि कैसे याकूब ने अपने पाठकों को मार्गदर्शन दिया। और तीसरा, हम विश्वास और कार्य में संबंध को देखेंगे। आइए पहले यह देखें कि कैसे याकूब ने अपने पाठकों की व्यावहारिक ज्ञान की आवश्यकता पर बल दिया।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

आवश्यकता

जैसा कि हमने पहले देखा, याकूब ने “बुद्धि" और “बुद्धिमान" शब्दों का प्रयोग दो संदर्भों में किया। इनमें से पहला 1:2-18 में है जहाँ याकूब ने चिंतनशील ज्ञान पर बल दिया। दूसरा 3:13-18 में है जहाँ याकूब ने ज्ञान को कार्य लाने की आवश्यकता पर बल दिया।

> याकूब एक बहुत ही व्यावहारिक पत्री है, और वह वास्तव में यह सुनिश्चित करना चाहता है कि लोग जिस बात पर विश्वास करते हैं उसे कार्य में लाएँ। वह यह कहाँ से प्राप्त करता है? मेरा फिर से यही मानना है कि इसका उत्तर स्वयं यीशु से है। मेरे कहने का अर्थ है, स्वयं यीशु ने बालू या चट्टान पर घर बनाने के बारे में दृष्टांत कहे, और इसमें महत्वपूर्ण बात यह है, “क्या तुम वह कर रहे हो जिसकी आज्ञा मैंने तुम्हें दी है? क्या उसे तुम कार्य में ला रहे हो जो मैं तुम्हें सिखा रहा हूँ?” यीशु इसी बात को खोज रहा था। वह ऐसे लोगों को खोज रहा था जो अपने विश्वास को कार्यों में ढाल रहे थे। उसने फरीसियों के विरुद्ध भी चेतावनी दी थी, “इसलिये वे तुमसे जो कुछ कहें वह करना और मानना, परन्तु उनके से काम मत करना; क्योंकि वे कहते तो हैं पर करते नहीं।” अतः यीशु बातों को कार्य में लाने के विषय के प्रति बहुत गंभीर था, और इसलिए मेरे विचार से याकूब किसी न किसी अर्थ में वही कहते हुए अपने भाई यीशु का अनुसरण कर रहा है जो वास्तव में महत्वपूर्ण है। शायद इसका एक दूसरा कारण भी है जिसका अनुमान हम आरंभिक कलीसिया से लगा सकते हैं, और वह यह है कि हो सकता है कि याकूब ने यह देखना शुरू कर दिया हो कि यह मसीही साक्षी के लिए कितना नुकसानदायक होगा जब उसकी मंडली के कुछ यहूदी मसीही वास्तव में यीशु के जीवन को न दर्शाएँ। उनके पास यीशु के बारे में बड़ी-बड़ी धर्मशिक्षाएँ थीं, परंतु वे वास्तव में उन्हें कार्य में नहीं ला रहे थे, और शायद यह आलोचना भी हो रही थी, “तुम जो प्रचार करते हो उसे कार्य में नहीं लाते,” और उससे मसीही संदेश की बदनामी होती . . . स्वयं यीशु ने कहा था, “सिद्ध बनो,” और याकूब इस शिक्षा को दोहराता है। वह चाहता है कि लोग बातों को कार्य में लाएँ, और हम इसी बात पर बल को देखते हैं।
>
> — डॉ. पीटर वॉकर

याकूब 3:13 को और उस तरीके को सुनिए जिसमें याकूब ने व्यावहारिक ज्ञान के मूल सिद्धांतों का परिचय दिया :

> तुम में ज्ञानवान और समझदार कौन है? जो ऐसा हो वह अपने कामों को अच्छे चालचलन से उस नम्रता सहित प्रगट करे जो ज्ञान से उत्पन्न होती है (याकूब 3:13)।

जब हम यह स्मरण करते हैं कि याकूब के पाठकों में से बहुत से पुराने नियम से परिचित यहूदी विश्वासी थे, तो यह समझना कठिन नहीं है कि क्यों इनमें से कुछ ने “ज्ञानवान और समझदार” होने का दावा किया। परंतु याकूब ने बल दिया कि यदि यह दावा सच्चा था तो वह इसे “अच्छे चालचलन से” प्रकट करे। दूसरे शब्दों में, उन्हें *व्यावहारिक* ज्ञान की आवश्यकता थी। पुराने नियम की शिक्षा के प्रभाव में — विशेषकर नीतिवचन की पुस्तक — याकूब जानता था कि बुद्धि गहन धर्मवज्ञानिक अंतर्दृष्टियों से कहीं अधिक गहरी थी।

जिन्होंने पूरे मन से परमेश्वर की समझ को अपना लिया था, वे एक “अच्छा चालचलन” रखेंगे जो कि ज्ञान से आता है। परंतु याकूब ने यह दर्शाया है कि अच्छे चालचलन में “कार्य" या “कर्म" शामिल होते हैं, जैसा कि इसका अनुवाद किया जा सकता है। और इसमें निश्चित व्यवहार सम्मिलित होते हैं, जैसे “नम्रता।” जैसा कि हम देखेंगे, व्यावहारिक ज्ञान के लिए सही कर्म और व्यवहार दोनों आवश्यक होते हैं।

व्यावहारिक ज्ञान की आवश्यकता को और अधिक स्पष्ट करने के लिए याकूब ने दो तरह के व्यावहारिक ज्ञान की तुलना की जिसका उल्लेख हमने इस अध्याय के शुरू में किया है। उसने पहले सांसारिक ज्ञान का उल्लेख किया। और फिर, उसने स्वर्गीय ज्ञान के बारे में बात की। आइए पहले सांसारिक ज्ञान को देखें।

सांसारिक ज्ञान

याकूब 3:14-16 में हम सांसारिक ज्ञान के इस विवरण को पाते हैं :

> **पर यदि तुम अपने-अपने मन में कड़वी डाह और विरोध रखते हो, तो सत्य के विरोध में घमण्ड न करना, और न तो झूठ बोलना। यह ज्ञान वह नहीं जो ऊपर से उतरता है, वरन् सांसारिक, और शारीरिक, और शैतानी है। क्योंकि जहाँ डाह और विरोध होता है, वहाँ बखेड़ा और हर प्रकार का दुष्कर्म भी होता है (याकूब 3:14-16)।**

जैसा कि हमने इस अध्याय के पहले हिस्से में देखा, याकूब कलीसिया के गरीब और धनवान विश्वासियों के बीच की अशांति के कारण बहुत चिंतित था। और पद 3:14 में वह इस तथ्य को प्रकट करता है कि कलीसियाओं में बहुत से लोग “अपने-अपने मन में कड़वी डाह और विरोध” रखते थे। और पद 15 के अनुसार उनमें से कुछ लोगों ने अपने इन व्यवहारों को “ज्ञान” कह कर न्यायोचित ठहराया था। परंतु याकूब ने उन्हें चेतावनी दी कि वे अपने इन कार्यों पर घमंड न करें या उस सत्य का इनकार न करें जो वह उन्हें समझाने पर था।

बहुत से आधुनिक मसीहियों को यह समझने में कठिनाई होती है कि याकूब आरंभिक कलीसिया में गरीबों और धनवानों के बीच के संघर्ष के बारे में इतना चिंतित क्यों था। आज भी कलीसिया में गरीब और धनवान विश्वासी हैं, विशेष रूप से जब हम विभिन्न देशों के मसीहियों की तुलना करते हैं। परंतु आधुनिक संसार में स्थानीय मंडलियाँ पहली सदी की अपेक्षा सामजिक रूप से अधिक सजातीय होना पसंद करती हैं। धनी विश्वासी धनी लोगों के साथ कलीसिया जाना पसंद करते हैं, और गरीब मसीही उनके साथ कलीसिया जाना पसंद करते हैं जो गरीब हैं। परंतु कल्पना करें यदि आपकी अपनी कलीसिया में अत्यंत गरीब और अत्यंत धनी लोग हों। तो इससे कितना अधिक विभाजन उत्पन्न होगा? कुछ विश्वासी कलीसिया में फटे कपड़ों में आएँगे, यह न जानते हुए कि उनका अगला भोजन कहाँ से आएगा, जबकि अन्य उसी कमरे में मँहगे कपड़े पहने हुए पैसों से भरी जेबों के साथ बैठे होंगे। यदि आपकी स्थानीय कलीसिया में ऐसा हो तो आपकी कलीसिया में भी अशांति फ़ैल जाएगी।

याकूब के समय में गरीबों और धनवानों के बीच के संघर्ष उन कलीसियाओं को बहुत नुकसान पहुँचा रहे थे जिन्हें वह संबोधित कर रहा था। स्पष्ट रूप से, गरीबों ने धनवानों के प्रति अपनी डाह में स्वयं को सही, यहाँ तक कि ज्ञानवान समझा। वे पुराने नियम के नीतिवचनों को जानते थे जो धनवानों को कंगालों के प्रति उदार होने के निर्देश देते थे। इसलिए उनके मसीही भाई बहनों को चाहिए था कि जो उनके पास था वे उसे उनके साथ बाँटते। और धनी विश्वासियों ने स्वार्थी होते हुए भी स्वयं को पूरी तरह से सही, यहाँ तक कि बुद्धिमान माना। वे पुराने नियम के नीतिवचनों को उद्धृत कर सकते थे जो उनके कंगाल होने का दोष उनके आलस पर लगाते हैं और धन-संपत्ति को कठिन परिश्रम का फल मानते हैं।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

परंतु याकूब ने दर्शाया कि इस तरह का ज्ञान केवल गलत या भटके हुए होने की अपेक्षा बहुत अधिक बुरा था। यह सांसारिक, अनात्मिक, या स्वाभाविक और शैतानी था। और इसके शैतानी मूल के होने का प्रमाण बिल्कुल सही था। इसने कलीसिया में हर प्रकार के बखेड़े और बुरे कार्यों को उत्पन्न कर दिया था।

> मेरे विचार से हर कोई ऐसे लोगों से परिचित होगा जो स्वयं को अपनी दृष्टि में बुद्धिमान समझते हैं, और इस तरह का ज्ञान अक्सर घमंड, शत्रुतापूर्ण स्वभाव, विरोधी होने की इच्छा के साथ पाया जाता है। और याकूब कहता है कि वह परमेश्वर का ज्ञान नहीं है। वास्तव में, इस तरह का ज्ञान, अर्थात् सांसारिक ज्ञान, या जिसे वह संसार से प्राप्त कहता है, केवल खतरनाक या अनुपयोगी नहीं है — वह वास्तव में इसे “शैतानी" कहता है। जबकि परमेश्वर की ओर से आनेवाला ज्ञान ऐसा ज्ञान है जो प्रभु के भय से आता है, और फलस्वरूप, इसमें नम्रता पाई जाती है; इसमें तरस पाया जाता है; इसमें प्रभु के प्रति विश्वासयोग्यता पाई जाती है, उसके समान जो स्वीकार करता है कि ज्ञान उनकी ओर से उत्पन्न नहीं हुआ है बल्कि स्वयं परमेश्वर से उत्पन्न हुआ है जिसने उन्हें यह बड़ी उदारता के साथ दिया है, जैसे कि याकूब कहता है। इसी प्रकार के ज्ञान का अनुसरण मसीहियों को, यीशु मसीह के अनुयायियों को, बुद्धिमान संतों को जो सुलैमान से भी महान हैं, करना चाहिए, यही वह ज्ञान है जिसका अनुसरण उसके अनुयायियों को अपने जीवनों में करना आवश्यक है।
>
> — डॉ. स्कॉट रेड

अंत में, परमेश्वर के कार्य को बढ़ाने की अपेक्षा मसीह की देह आपस में लड़ते हुए विभाजित हो गई थी। जिन मंडलियों को याकूब ने पत्र लिखा था वे शैतान का शिकार हो गईं जो परमेश्वर के कार्य को नाश कर देना चाहता था। और यह वही विनाश था जिसने याकूब को यह समझने के लिए प्रेरित किया कि उसके पाठकों को व्यावहारिक ज्ञान की आवश्यकता थी।

नाश करनेवाले, सासांरिक ज्ञान को ठुकराने के द्वारा व्यावहारिक ज्ञान की आवश्यकता पर बल देने के बाद याकूब तुरंत एक विकल्प की ओर मुड़ता है, जिसे उसने स्वर्गीय ज्ञान कहा।

स्वर्गीय ज्ञान

पद 3:17 में याकूब ने इस सकारात्मक स्वर्गीय ज्ञान का वर्णन किया :

> पर जो ज्ञान ऊपर से आता है वह पहले तो पवित्र होता है फिर मिलनसार, कोमल और मृदुभाव और दया और अच्छे फलों से लदा हुआ और पक्षपात और कपट रहित होता है (3:17)।

यहाँ हम देखते हैं कि याकूब के मन में स्वर्गीय ज्ञान, अर्थात् वह ज्ञान था जो परमेश्वर की ओर से आता है। यह ज्ञान मिलनसार, कोमल और मृदुभाव, दया और अच्छे फलों से परिपूर्ण, निष्पक्ष और सच्चा होता है। दूसरे शब्दों में, स्वर्गीय ज्ञान न तो गरीब में और न ही धनवान में डाह और स्वार्थी महत्वाकांक्षा को सही ठहराता है। परमेश्वर द्वारा दिया जानेवाला सच्चा ज्ञान शांति को बढ़ाता है। और परमेश्वर के लोग इस शांति को दूसरों के साथ मिलनसार होकर, दूसरों के प्रति समर्पित होकर, और दयालु बनकर प्रकट करते हैं। वे अच्छे फल उत्पन्न करते हैं और किसी एक समूह के प्रति पक्षपात नहीं दर्शाते। और ये सभी कार्य और व्यवहार मसीह के प्रति सच्ची भक्ति से उत्पन्न होते हैं।

> ऊपर से आनेवाला ज्ञान, जो परमेश्वर की ओर से आता है — क्योंकि यह श्रेष्ठ है — निस्संदेह परमेश्वर के अपने गुणों का प्रतिबिंब है। याकूब कहता है कि यह खरा है, शांतिपूर्ण है, कोमल है, यह अच्छे फलों से लदा हुआ है, यह दयालु है और यह अटल है, और यह सच्चा है या कपटरहित है, दूसरे शब्दों में ये ऐसे गुण हैं जो यीशु का वर्णन करते हैं। यीशु में ऐसे गुण थे। और याकूब कहता है कि यही वे बातें हैं — वे आपको जीवन में आगे नहीं बढ़ाएँगी, वे आपको सफल नहीं बनाएँगी, उनका अर्थ यह नहीं होगा कि आप बड़े मकान में रहेंगे, परंतु याकूब कहता है कि इनका परिणाम धार्मिकता और शांति है; दूसरे शब्दों में सच्चा शालोम, सच्ची शांति। और रूचिपूर्ण यह है कि प्रत्येक व्यक्ति वास्तव में शालोम, पूर्णता, संपूर्णता, शांति को चाहता है। वे उन चीजों को चाहते हैं, और वे सोचते हैं कि सांसारिक ज्ञान ही उन्हें यह सब कुछ दे देगा, परंतु वास्तव में वैसी शांति स्वर्गीय ज्ञान से मिलती है जो अपनी उन्नति नहीं चाहता, बल्कि, याकूब 3:13 के अनुसार, इसमें नम्रता, दीनता के गुण पाए जाते हैं, यह अपनी उन्नति नहीं चाहता बल्कि दूसरों की भलाई और कल्याण चाहता है।
>
> — डॉ. डान मैक्कार्टनी

पद 3:18 में याकूब ने अपने पाठकों का ध्यान उस नीतिवचन की ओर लगाया जो सबसे जाना-पहचाना है :

> मिलाप करानेवाले धार्मिकता का फल मेलमिलाप के साथ बोते हैं (याकूब 3:18)।

मत्ती 5:9 यीशु के द्वारा में कहे हुए धन्य मेल करानेवालों के समान ही याकूब ने स्पष्ट कर दिया कि कलीसिया के गरीब और धनवान दोनों अपनी धार्मिकता के बड़े पुरस्कार को प्राप्त करेंगे — यदि वे कलीसिया में मेल करानेवाले बन जाएँ।

अब जबकि हमने व्यावहारिक ज्ञान को देख लिया है और उस आवश्यकता को भी देख लिया है जिसने याकूब को अपनी पत्री में इस विषय पर इतना समय देने के लिए प्रेरित किया, तो हमें उस मार्गदर्शन की ओर मुड़ना चाहिए जो उसने अपने पाठकों को इस विषय पर दिया कि कैसे उन्हें परमेश्वर के ज्ञान को कार्य में लाना चाहिए।

मार्गदर्शन

मसीह के अनुयायियों के लिए व्यावहारिक धर्मविज्ञान की आवश्यकता के बारे में बहुत बात करना आम बात है। हम ऐसे संदेशों को चाहते हैं जो व्यावहारिक हों। हम ऐसे सबकों को चाहते हैं जो हमें बताएँ कि कैसे जीवन जीना है। और संसार के कई भागों में ऐसी विश्वसनीय सामग्री उपलब्ध है जो हमें जीवन के लगभग प्रत्येक क्षेत्र में मार्गदर्शन देती है। परंतु याकूब की पत्री हमें ऐसे मापदंडों और प्राथमिकताओं की याद दिलाती है जिन्हें अक्सर हम अपने दैनिक जीवन में ज्ञान के अनुसरण में भूल जाते हैं।

याकूब की पत्री में व्यावहारिक जीवन के मार्गदर्शन के बारे में बहुत सी विशेष बातें पाई जाती हैं। परंतु, हम दो विषयों पर ही बात करेंगे। पहला, हम ध्यान देंगे कि कैसे याकूब ने परमेश्वर की व्यवस्था के मापदंड को बनाए रखा। और दूसरा, हम देखेंगे कि याकूब ने परमेश्वर की व्यवस्था की कुछ प्राथमिकताओं को महत्व दिया। आइए पहले हम परमेश्वर की व्यवस्था के मापदंड को देखें।

परमेश्वर की व्यवस्था का मापदंड

अधिकांश आधुनिक मसीही विश्वासी उन चेतावनियों से अवगत हैं जिन्हें नया नियम परमेश्वर की पुराने नियम की व्यवस्था के बारे में दर्शाता है। पहली यह है, हम जानते हैं कि उद्धार अनुग्रह से, विश्वास के द्वारा है, न कि कर्मों के कारण। और व्यवस्था की आज्ञाकारिता के द्वारा उद्धार को अर्जित करने के हर प्रयास के विरूद्ध खड़े होने के द्वारा पौलुस की गलातियों जैसी पुस्तकों में दिए महत्व का उचित रीति से पालन करते हैं।

इसके अतिरिक्त, हम जानते हैं कि हमें परमेश्वर की व्यवस्था को ऐसे लागू नहीं करना है कि मानो हम अब भी पुराने नियम के दिनों में जी रहे हों। हम सही रूप से इब्रानियों जैसी पुस्तकों में दिए महत्व का पालन करते हैं और परमेश्वर की व्यवस्था को उन रूपों में लागू करते हैं जिनमें मसीह और उसके प्रेरितों और भविष्यवक्ताओं ने नए नियम के युग में लागू करने की हमें शिक्षा दी है।

अब ये चेतावनियाँ कितनी भी महत्वपूर्ण क्यों न हों, हम इन्हें याकूब की पत्री में नहीं पाते। इसकी अपेक्षा, याकूब ने परमेश्वर की व्यवस्था का वर्णन बहुत ही सकारात्मक रूपों में किया है। उसने इस बात पर जोर दिया है जिसे पारंपरिक रूप से “व्यवस्था का तीसरा प्रयोग” कहा जाता है। हम व्यवस्था का पालन मसीह में परमेश्वर द्वारा दिखाई गई दया के प्रति हमारे आभार की एक अभिव्यक्ति के रूप में करते हैं।

व्यवस्था जो स्वतंत्रता देती है। याकूब ने परमेश्वर की व्यवस्था के दो विवरण दिए जो केवल उसकी पत्री में पाए जाते हैं। पहला, उसने उसे ऐसी व्यवस्था कहा जो स्वतंत्रता देती है।

याकूब ने 1:25 और 2:12 में स्वतंत्रता देनेवाली व्यवस्था के बारे में बात की। वहाँ उसने कहा कि व्यवस्था हमें पाप के बंधन और उसके विनाशकारी प्रभावों से स्वतंत्र करती है। जब हम व्यवस्था का पालन परमेश्वर के प्रति आभार के कारण करते हैं, तो यह वास्तव में हमें स्वतंत्रता देती है। यीशु ने यूहन्ना 8:32 में इसी दृष्टिकोण को दर्शाया जहाँ उसने यह कहा :

> तुम सत्य को जानोगे, और सत्य तुम्हें स्वतंत्र करेगा (यूहन्ना 8:32)।

रोमियों 7:7-13 में पौलुस ने व्यवस्था का वर्णन ऐसी वस्तु के रूप में किया जिसका प्रयोग पाप हम में बुरी इच्छाओं को उत्पन्न करने के लिए करता है कि हमें पाप का दास बनाए। परंतु जब याकूब ने व्यवस्था को “स्वतंत्रता देने वाली व्यवस्था” कहा तो उसने वर्णन किया कि कैसे परमेश्वर का आत्मा व्यवस्था को व्यावहारिक ज्ञान के लिए हमारे आधिकारिक मार्गदर्शक के रूप में सकारात्मक रूप से प्रयोग करता है।

जैसा कि हमने देखा है, याकूब के कई पाठक पाप के जालों में फँसे हुए थे जो कलीसिया को नुकसान पहुँचा रहे थे और उन्हें निराशा की दशा में छोड़ रहे थे। और जब तक वे ज्ञान के अपने विचारों का अनुसरण करते रहे, तब तक वे निराशा, परेशानियों और हानि से बचने में असमर्थ थे जो पाप उनके जीवनों में लेकर आया था। परंतु जिस प्रकार परमेश्वर के वचन ने उन्हें पहले पाप के दंड और बंधन से स्वतंत्र किया था, उसी प्रकार परमेश्वर के वचन ने उनके दैनिक व्यावहारिक जीवन के मार्ग को भी दिखाया जो उन्हें पाप की अशांति और निराशा से भी स्वतंत्र करेगा।

> व्यवस्था निश्चित रूप से विश्वासियों के जीवन का मार्गदर्शन करती है, उन्हें डांटती है, सुधारती है — है ना? — और उन्हें परमेश्वर की इच्छा के साथ सामंजस्य में वापस लाने का प्रयास करती है। और इसीलिए मैं सोचता हूँ कि याकूब ने इसे स्वतंत्रता, अर्थात् मुक्ति की व्यवस्था कहा है, और कि हमारा न्याय स्वतंत्रता की व्यवस्था के द्वारा होगा। मेरे कहने का यह अर्थ है वह स्वतंत्रता जो मसीह ने हमें दी है, और इसलिए, हमें एक दूसरे के लिए जीना और परस्पर व्यवहार करना है।

> हमारा न्याय उस व्यवस्था के द्वारा किया जाएगा जिसमें परमेश्वर कोई पक्षपात नहीं दिखाता और अपना अनुग्रह मुफ्त में देता है, और इसलिए, हमें भी इसी अनुग्रह और निष्पक्षता के साथ एक दूसरे, गरीब और धनी, बुजुर्ग और जवान, दास और स्वतंत्र, पुरूष और स्त्री से व्यवहार करना है जैसे पवित्र जन पौलुस वास्तव में कहता है।
>
> — डॉ. जेफ्री ए. गिब्स

इसीलिए पद 1:22-25 में याकूब ने बल दिया :

> वचन पर चलनेवाले बनो, और केवल सुननेवाले ही नहीं जो अपने आप को धोखा देते हैं। ...जो व्यक्ति स्वतंत्रता की सिद्ध व्यवस्था पर ध्यान करता रहता है, वह अपने काम में इसलिये आशीष पाएगा कि सुनकर भूलता नहीं पर वैसा ही काम करता है। (याकूब 1:22-25)।

राज व्यवस्था। परमेश्वर की व्यवस्था को स्वतंत्रता देनेवाली व्यवस्था कहने के अतिरिक्त याकूब ने परमेश्वर की व्यवस्था को सकारात्मक रूप से राज व्यवस्था के रूप में भी दर्शाया।

याकूब ने पद 2:8 में व्यवस्था को "राज व्यवस्था" कहा। इस शब्दावली ने परमेश्वर की आज्ञाओं के एक ऐसे दृष्टिकोण की ओर ध्यान खींचा जो पूरे पुराने और नए नियम में पाया जाता है। परमेश्वर की व्यवस्था उसकी राजकीय विधि थी। यह सर्वोच्च शासक की ओर से उसके राज्य के नागरिकों के रूप में उसके लोगों के लिए आई थी।

अब, आधुनिक संसार में हम अक्सर इस राजकीय रूपक के महत्व को समझने में कठिनाई महसूस करते हैं। हममें से बहुत कम लोग ऐसे देशों में रहते हैं जहाँ शक्तिशाली राजा शासन करते हैं। परंतु याकूब के पाठक रोमी सम्राट के अधिकार के अधीन रहते थे। वे जानते थे कि परमेश्वर की व्यवस्था को "राज व्यवस्था" कहने का क्या अर्थ था। सरल रूप में कहें तो वे जानते थे कि परमेश्वर की व्यवस्था को हल्के में नहीं लिया जाना था। यह ऐसी नहीं थी जिसे हम जब चाहे ले लें और जब चाहे छोड़ दें। यह ब्रह्मांड के ईश्वरीय राजा की ओर से दी गई है। और इसके प्रत्येक भाग का हम पर संपूर्ण अधिकार है।

पद 2:8-10 और उस तरीके को सुनिए जिसमें याकूब ने परमेश्वर की राज व्यवस्था के अधिकार का वर्णन किया है :

> यदि तुम पवित्रशास्त्र ... की राज व्यवस्था को पूरी करते हो, तो अच्छा ही करते हो ... क्योंकि जो कोई सारी व्यवस्था का पालन करता है परन्तु एक ही बात में चूक जाए तो वह सब बातों में दोषी ठहर चुका है। (याकूब 2:8-10)।

याकूब के यहूदी-मसीही पाठकों में से यदि सब नहीं तो बहुत से लोग समझ गए थे कि परमेश्वर की व्यवस्था महत्वपूर्ण थी। परंतु जैसा कि हम यहाँ देखते हैं, उन्होंने स्वयं को व्यवस्था की चुनिंदा बातों के प्रति समर्पित किया था। उन्होंने इसके कुछ भागों का पालन किया और अन्य भागों को अनदेखा कर दिया। इसलिए याकूब ने उन्हें याद दिलाया कि व्यवस्था "पवित्रशास्त्र में पाई जानेवाली राज व्यवस्था" है। यह उनके ईश्वरीय राजा की ओर से आई है। और इसीलिए "जो कोई सारी व्यवस्था का पालन करता है परन्तु एक ही बात में चूक जाए तो वह सब बातों में दोषी ठहर चुका है।"

यह प्राचीन मानवीय राजाओं के लिए अस्वीकार्य था कि उसके नागरिक केवल उन्हीं कानूनों का पालन करें जिन्हें वे सुविधाजनक या पसंदीदा मानते हैं। और इसी प्रकार, मसीह के अनुयायियों के लिए यह अस्वीकार्य था कि वे परमेश्वर के राज्य की व्यवस्था के उन्हीं नियमों का पालन करें जिन्हें वे

सुविधाजनक या पसंदीदा मानते हैं। प्राचीन मानवीय राजा इस तरह के चुनिंदा पालन को उनके राजकीय अधिकार के विरुद्ध विद्रोह मानते थे। और परमेश्वर ने भी ऐसे चुनिंदा पालन को अपने राजकीय अधिकार के प्रति विद्रोह माना। परमेश्वर की व्यवस्था व्यावहारिक ज्ञान का मापदंड है, और यह उन सब को स्वतंत्रता प्रदान करेगी जो सच्चाई से उसके सब राजकीय उपदेशों का पालन करने का प्रयास करते हैं।

अब जबकि हमने देख लिया है कि कैसे याकूब ने बल दिया कि व्यावहारिक ज्ञान का मार्गदर्शन परमेश्वर की व्यवस्था के मापदंड में पाया जाता है, इसलिए हमें उन तरीकों की ओर मुड़ना चाहिए जिनमें उसने परमेश्वर की व्यवस्था की कुछ प्राथमिकताओं पर बल दिया है।

परमेश्वर की व्यवस्था की प्राथमिकताएँ

आइए इसका सामना करें, जब कभी मसीही परमेश्वर द्वारा हमें दी गई *सब* आज्ञाओं के पालन के बारे में बात करते हैं, तो हम एक बहुत ही व्यावहारिक समस्या में चले जाते हैं। आज्ञाएँ इतनी हैं कि उन्हें याद रखना भी मुश्किल है, पालन करने की तो बात ही अलग है। अतः हमारी सीमितता के कारण हम केवल इस या उस आज्ञा पर ही ध्यान केंद्रित कर सकते हैं। और निस्संदेह तब पवित्रशास्त्र के केवल उन भागों पर ध्यान देने के द्वारा जिनका पालन हम करना चाहते हैं, हमारे लिए परमेश्वर के वचन के अधिकार को कम करने के जाल में फँसना आसान हो जाता है। इस समस्या से बचने के लिए हमें उन प्राथमिकताओं को पहचानने की जरूरत है जो व्यवस्था स्वयं हमें देती है। और हमें हमेशा परमेश्वर की व्यवस्था के अधिक महत्वपूर्ण पहलुओं को प्राथमिकता देनी चाहिए।

आपको याद होगा कि मत्ती 22:34-40 में यीशु ने परमेश्वर की व्यवस्था की प्राथामिकताओं के बारे में बात की थी। इन पदों में उसने दो सबसे बड़ी आज्ञाओं को पहचाना। उसने बड़े ही स्पष्ट शब्दों में घोषणा की कि व्यवस्थाविवरण 6:5 की परमेश्वर से प्रेम करने की आज्ञा पर ध्यान देना सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत है। और उसने लैव्यव्यवस्था 19:18 से अपने पड़ोसी से प्रेम करने को दूसरे सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत के रूप में पहचाना।

प्रेरित पौलुस स्पष्ट रूप से समझ गया था कि परमेश्वर से प्रेम करना सबसे बड़ी आज्ञा थी। परंतु गलातियों 5:14 में उसने यह भी कहा है कि अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रखने में संपूर्ण व्यवस्था पूरी हो जाती है। यह बड़ा रोचक है कि याकूब ने भी ऐसा ही किया। पद 2:8-10 के शेष भाग और दूसरी सबसे बड़ी आज्ञा पर याकूब के विशेष बल को सुनिए :

> **यदि तुम पवित्रशास्त्र के इस वचन के अनुसार कि "तू अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख" सचमुच उस राज व्यवस्था को पूरी करते हो, तो अच्छा ही करते हो। पर यदि तुम पक्षपात करते हो तो पाप करते हो; और व्यवस्था तुम्हें अपराधी ठहराती है। क्योंकि जो कोई सारी व्यवस्था का पालन करता है परन्तु एक ही बात में चूक जाए तो वह सब बातों में दोषी ठहर चुका है (याकूब 2:8-10)।**

यहाँ ध्यान दें कि कैसे याकूब ने लैव्यव्यवस्था 19:18 के शब्दों में राज व्यवस्था की प्राथमिकताओं को सारगर्भित किया : "अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख।"

यह कोई भेद की बात नहीं है कि याकूब ने ऐसा क्यों किया। कलीसिया के गरीब और धनी विश्वासियों के बीच का संघर्ष उनके द्वारा इस दूसरी सबसे बड़ी आज्ञा की उपेक्षा करने का परिणाम था।

जैसा कि याकूब ने यहाँ ध्यान दिया कि जो धनवानों के पक्ष में "पक्षपात करते" हैं "व्यवस्था उन्हें अपराधी ठहराती है।" और यह कोई छोटी बात नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति जो व्यवस्था की एक बात का पालन करने से चूक जाता है, "वह सब बातों में दोषी ठहर चुका है।" इसलिए, परमेश्वर की व्यवस्था, अर्थात् व्यावहारिक ज्ञान का आधिकारिक मार्गदर्शक, एक दूसरे के प्रति हमारे प्रेम को बड़ी प्राथमिकता

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

देता है, जो केवल परमेश्वर से अपने संपूर्ण मन से प्रेम करने के बाद आती है। जैसे कि याकूब ने पद 1:27 में धनवानों को याद दिलाया :

> हमारे परमेश्वर और पिता के निकट शुद्ध और निर्मल भक्ति यह है कि अनाथों और विधवाओं के क्लेश में उनकी सुधि लें, और अपने आप को संसार से निष्कलंक रखें (याकूब 1:27)।

> इसलिए, सच्ची भक्ति की जाँच क्या है? यह नहीं कि आप अच्छे नैतिक कार्य करें, जो आपको समाज में अच्छा दिखाएँ, परंतु वास्तविक जाँच परमेश्वर के मार्गों का अनुसरण है — परमेश्वर अनाथों की देखभाल करता है; परमेश्वर विधवाओं की देखभाल करता है — जब कोई नहीं देख रहा हो, जब आपको इसके बदले में कुछ न मिले। अनाथ कौन है? विधवा कौन है? वह ऐसा व्यक्ति है जो बदले में आपको कुछ भी नहीं दे सकता। इसलिए अपने पड़ोसी या अपने स्वामी के प्रति दयालुता का कार्य सच्ची भक्ति के प्रमाण के रूप में नहीं गिना जाता। परंतु परमेश्वर कंगालों से प्रेम करता है; परमेश्वर कमजोर से कमजोर की देखभाल करता है और अपने लिए बदले में कोई भौतिक वस्तु को प्राप्त करना नहीं चाहता। निस्संदेह वह हमसे स्तुति लेता है, और उस भलाई में हर्षित होता है जो हम करते हैं। परंतु उन लोगों की देखभाल करना जो बदले में कुछ नहीं दे सकते, एक बहुत बड़ी जाँच है।
>
> — डॉ. डान डोरीआनी

याकूब ने धनी लोगों की इस आवश्यकता पर बल दिया कि वे अपने गरीब पड़ोसियों से प्रेम करने के द्वारा परमेश्वर की व्यवस्था की प्राथमिकताओं का अनुसरण करें। परंतु पड़ोसी के प्रति प्रेम व्यावहारिक ज्ञान के लिए इतना महत्वपूर्ण था कि याकूब ने बल दिया कि कैसे यह गरीबों पर भी लागू होता है। कुछ उदाहरण यदि देखें तो अपनी पूरी पत्री में याकूब ने यह स्पष्ट किया कि अपने पड़ोसी से प्रेम करने का अर्थ अपनी जीभ को आशीष के साधन के रूप में प्रयोग करना है।

पद 1:19 में याकूब ने लोगों को एक दूसरे के के प्रति "सुनने के लिये तत्पर और बोलने में धीर और क्रोध में धीमा" होने की सलाह दी। पद 4:1-3 में याकूब ने बल दिया कि लड़ाईयाँ, झगड़े और बदनामी परमेश्वर के लोगों के बीच बिल्कुल नहीं होने चाहिए। पद 4:11 में उसने "बदनामी" की निंदा की। और पद 5:9 में याकूब ने आदेश दिया कि "एक दूसरे पर दोष न लगाओ।" पद 5:16 के अनुसार, इसकी अपेक्षा उन्हें "आपस में एक दूसरे के सामने अपने-अपने पापों को मान [लेना है], और एक दूसरे के लिये प्रार्थना [करनी है]।"

यदि याकूब के पाठकों के विश्वासी यह दिखाना चाहते थे कि उनके पास स्वर्गीय ज्ञान है, तो वे स्वयं को परमेश्वर की व्यवस्था के मापदंड के प्रति समर्पित करते। और वे ऐसा एक दूसरे के प्रति उनके प्रेम को परमेश्वर की व्यवस्था के द्वारा दी गई प्राथमिकता को पूरी तरह से पहचानने के द्वारा करते।

अब जबकि हमने यह देख लिया है कि कैसे व्यावहारिक ज्ञान पर दिए गए याकूब के बल ने उसके पाठकों की आवश्यकता को संबोधित किया और मार्गदर्शन प्रदान किया, इसलिए आइए हम उसके द्वारा उठाए गए तीसरे मुख्य विषय को देखें : विश्वास और व्यावहारिक ज्ञान के बीच संबंध।

विश्वास

यदि मसीहियत का कोई केंद्रबिंदु है, तो वह विश्वास है। हम मसीहियत को "अपना विश्वास" कहते हैं। हम मसीह को अपने विश्वास का लक्ष्य कहते हैं। हम *सोला फिडे* या केवल विश्वास के द्वारा

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

धर्मी ठहराए जाने की प्रोटेस्टेंट धर्मशिक्षा की पुष्टि करते हैं। विश्वास की जिस प्रमुखता को हम आज स्वीकार करते हैं वह स्वयं नए नियम में विश्वास की केंद्रीयता में स्थापित है। पहली सदी की मसीहियत के केंद्र में भी विश्वास था। और इसी कारण, अपने पाठकों के समक्ष व्यावहारिक ज्ञान के महत्व को दर्शाने के लिए याकूब ने विश्वास का विषय उठाया।

हमारे पास इतना ही समय है कि हम केवल ऐसे दो तरीकों का ही उल्लेख करें जिनमें याकूब ने व्यावहारिक ज्ञान और विश्वास को जोड़ा है। पहला, याकूब ने विश्वास और कर्मों के संबंध को स्पष्ट किया; और दूसरा याकूब ने विश्वास और धर्मी ठहराए जाने के संबंध को स्पष्ट किया। आइए पहले देखें कि उसने विश्वास और कर्मों के बारे में क्या कहा।

विश्वास और कर्म

याकूब ने पद 2:14 में अपनी चर्चा को एक सीधे प्रश्न के साथ शुरू किया :

> **हे मेरे भाइयो, यदि कोई कहे कि मुझे विश्वास है पर वह कर्म न करता हो, तो इससे क्या लाभ? क्या ऐसा विश्वास कभी उसका उद्धार कर सकता है? (याकूब 2:14)**

और निस्संदेह याकूब के प्रश्न का उत्तर "नहीं" था। ऐसा विश्वास जो कर्मों सहित न हो, उद्धार नहीं कर सकता।

"विश्वास" या "भरोसा" का अनुवाद यूनानी संज्ञा *पिस्टिस* (πίστις) और क्रिया *पिस्टियो* (πιστεύω) से किया गया है। शब्दों का यह समूह नए नियम में हजारों बार पाया जाता है। परंतु हिंदी के "विश्वास" और "भरोसे" के समान ये शब्द भी कई भिन्न अर्थों को दर्शाते हैं।

कुछेक का उल्लेख यहाँ करें तो, कई बार नए नियम में विश्वास और भरोसा केवल बौद्धिक सहमति दर्शाते हैं कि कोई बात सत्य है। अन्य समयों पर, वे किसी अस्थाई समर्थन को दर्शाते हैं। तथा कई बार, वे उसे दर्शाते हैं जिसे धर्मविज्ञानी अक्सर "उद्धार देनेवाला विश्वास" कहते हैं। उद्धार देनेवाला विश्वास उद्धार के मार्ग के रूप में मसीह पर पूर्ण हृदय के साथ जीवन-पर्यंत का भरोसा और निर्भरता है। याकूब स्वीकार करता है कि "विश्वास" और "भरोसे" के कई अर्थ हो सकते हैं। और इसी कारण, उसने अपने पाठकों से कहा कि वे जाँचें कि उनमें कैसा विश्वास है। उदाहरण के लिए, पद 2:19 में याकूब ने अपने यहूदी-मसीही पाठकों को इन वचनों से चुनौती दी :

> **तुझे विश्वास है कि एक ही परमेश्वर है; तू अच्छा करता है। दुष्टात्मा भी विश्वास रखते, और थरथराते हैं (याकूब 2:19)।**

जब याकूब ने यह माना कि उसके पाठक विश्वास करते थे — क्रिया शब्द *पिस्टियो* (πιστεύω) से — कि एक ही परमेश्वर है, तो उसने वह दर्शाया जिसे *शेमा* कहा जाता है। व्यवस्थाविवरण 6:4 में पुराने नियम का प्राचीन विश्वास-अंगीकरण हमें यह बताता है, "हे इस्राएल, सुन, यहोवा हमारा परमेश्वर है, यहोवा एक ही है।" याकूब के दृष्टिकोण से यह अच्छा था कि उसके पाठकों ने इस सच्चाई के प्रति बौद्धिक सहमति दी। परंतु यह चाहे जितना भी अच्छा हो, इस तरह का विश्वास या भरोसा पर्याप्त नहीं होता क्योंकि "यहाँ तक कि दुष्टात्माएँ भी विश्वास करती हैं।" वास्तव में दुष्टात्माएँ डर से कांपती हैं जब वे इसके बारे में सोचती हैं। परंतु इससे उन्हें कोई लाभ नहीं होता। आज्ञाकारिता के बिना केवल बौद्धिक सहमति उद्धार देनेवाला विश्वास नहीं है। या जैसे याकूब ने 2:26 में संक्षेप में व्यक्त किया :

> **अत: जैसे देह आत्मा बिना मरी हुई है, वैसा ही विश्वास भी कर्म बिना मरा हुआ है (याकूब 2:26)।**

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

विश्वास और कर्मों की इस मूल धारणा को मन में रखते हुए, हमें विश्वास और धर्मी ठहराए जाने के विषय में याकूब के विवरण का उल्लेख भी करना चाहिए।

विश्वास और धर्मी ठहराया जाना

यह प्रश्न कि परमेश्वर के सामने कौन धर्मी ठहराया गया या धर्मी है, याकूब के समय में यहूदी शिक्षकों के बीच कुछ विवाद का विषय था। और यह पहली सदी की आरंभिक कलीसिया में भी केंद्रीय विषय बना रहा। किसे धर्मी ठहराया जाता है? किसे धर्मी गिना जाता है? पद 2:21-24 में याकूब ने इस प्रश्न का उत्तर इस प्रकार दिया :

> **जब हमारे पिता अब्राहम ने अपने पुत्र इसहाक को वेदी पर चढ़ाया, तो क्या वह कर्मों से धार्मिक न ठहरा था? ... इस प्रकार तुम ने देख लिया कि मनुष्य केवल विश्वास से ही नहीं, वरन् कर्मों से भी धर्मी ठहरता है (याकूब 2:21-24)।**

यहाँ याकूब ने यूनानी क्रिया *डिकाइयो* (δικαιόω) का प्रयोग करते हुए धर्मी ठहराए जाने के विषय में बात की, जिसका अर्थ "धर्मी घोषित करना", "धर्मी ठहराना" या "निर्दोष साबित करना" है। उसने तर्क दिया कि अब्राहम अपने कर्मों के द्वारा धर्मी या निर्दोष ठहरा, अर्थात् उत्पत्ति 22 में परमेश्वर के समक्ष अपने पुत्र इसहाक को चढ़ाने के कार्य के द्वारा। और इसी आधार पर उसने निष्कर्ष निकाला कि कोई भी केवल विश्वास के द्वारा धर्मी या निर्दोष नहीं ठहराया जाता। परमेश्वर द्वारा स्वीकार किए जानेवाला प्रत्येक व्यक्ति कर्मों के द्वारा धर्मी ठहराया जाता है।

याकूब के कथन ने सदियों से बहुत से विवादों को उत्पन्न किया है, मुख्यतः इसलिए क्योंकि यह प्रेरित पौलुस द्वारा धर्मी ठहराए जाने की शिक्षा के विरुद्ध प्रतीत होता है। पद 2:24 में याकूब यह कहता है :

> **मनुष्य केवल विश्वास से ही नहीं, वरन् कर्मों से भी धर्मी ठहरता है (याकूब 2:24)।**

इसके विपरीत, प्रेरित पौलुस ने गलातियों 2:16 में यह लिखा :

> **मनुष्य व्यवस्था के कामों से नहीं, पर केवल यीशु मसीह पर विश्वास करने के द्वारा धर्मी ठहरता है (गलातियों 2:16)।**

वास्तव में, यहाँ कोई विरोधाभास नहीं है। इसकी अपेक्षा, याकूब और पौलुस ने एक ही शब्द *डिकाइयो* (δικαιόω) या "धर्मी ठहराए जाने" का दो भिन्न रूपों में प्रयोग किया। पौलुस की तकनीकी धर्मवैज्ञानिक शब्दावली में उसने अक्सर "धर्मी ठहराए जाने" शब्द-समूह का प्रयोग केवल एक ही बात के लिए किया। पौलुस के लिए, "धर्मी ठहराया जाना" ने उन सब की धार्मिकता की आंतरिक घोषणा को दर्शाया जिनके पास मसीह की धार्मिकता के कारण मसीह पर उद्धार देनेवाला विश्वास है।

परंतु, याकूब ने धर्मी ठहराए जाने के बारे में अलग तरीके से बात की। याकूब ने शब्द *डिकाइयो* (δικαιόω) का प्रयोग "सही प्रमाणित होने" या "निर्दोष साबित होने" के रूप में किया। उसने इस बात का इनकार नहीं किया कि जब एक व्यक्ति पहले-पहल उद्धार देनेवाले विश्वास को कार्य में लाता है तो मसीह की धार्मिकता आरंभिक रूप में प्राप्त होती है। परंतु याकूब के लिए शब्द *डिकाइयो* उस व्यक्ति पर लागू होता है जिसने अपने विश्वास को प्रभु यीशु में रखा है और जो अपने जीवन में पवित्र आत्मा के द्वारा "सही प्रमाणित हुआ है" या "निर्दोष साबित हुआ है।" याकूब के दृष्टिकोण से आत्मा के द्वारा सामर्थी बनना मसीह के प्रति विश्वासयोग्य भक्ति की ओर लेकर चलता है। एक व्यक्ति चाहे कुछ भी दावा करे, यदि वे भले कार्यों के द्वारा अपने विश्वास को प्रकट नहीं करते तो अंततः वे निर्दोष नहीं ठहराए जाएँगे। अतः

याकूब ने विश्वास और धर्मी ठहराए जाने के इस संबंध को अपने पाठकों के लिए व्यावहारिक ज्ञान के महत्व को दर्शाने के एक तरीके के रूप में प्रकट किया।

> मेरे विचार में याकूब की पत्री में केवल विश्वास के द्वारा धर्मी ठहराए जाने के विषय पर आभासित संघर्ष वास्तव में एक मुख्य विषय है। यह सामने आ जाता है... शायद पुस्तकों में इस विशेष विषय पर अन्य किसी भी विषय से अधिक विचार-विमर्श किया गया है। सबसे पहले, मैं यह कहना चाहता हूँ कि यूनानी शब्द *डिकाइयो* का अर्थ कई बार "धर्मी ठहराए जाने का कार्य" होता है, जिसे यदि मैं सरल रूप में कहूँ तो धर्मी ठहराया जाना मूल रूप से एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। आपके पास एक ओर क्षमा है — परमेश्वर हमें क्षमा करता है। यह घटाने का पहलू है। दूसरी तरफ आपके पास बढ़ोतरी है, अर्थात् धार्मिकता को रोपित करना। और फिर वहाँ यह घोषणा है कि "तू मेरी दृष्टि में धर्मी ठहरा है।" और इस प्रकार, हम विश्वास के द्वारा धर्मी ठहरते हैं, और यह शब्द धर्मी ठहराए जाने का एक प्रयोग है। दूसरी ओर, हम धर्मी ठहराए जाने का प्रयोग "निर्दोष साबित होने" या "धर्मी के रूप में प्रकट होने" के अर्थ में कर सकते हैं। पौलुस इसका प्रयोग न्यायिक तरीके से करता है, और फिर याकूब है जो इसका प्रयोग कार्यों के उदाहरण के भाव में करता है, दूसरे शब्दों में, धर्मी होने को दिखाने में... अतः यदि हमें इसका सार निकालना हो, तो यह ऐसा होगा, धर्मी ठहराए जाने का पौलुस का प्रयोग विश्वास की प्राथमिकता है, और धर्मी ठहराए जाने को देखने का याकूब का तरीका मन परिवर्तन के बाद का या विश्वास का प्रमाण है... इसलिए, याकूब का प्रश्न यह है, "किसे धर्मी समझा जाना चाहिए? उसे जो कहता है कि वह परमेश्वर पर विश्वास करता है या उसे जो अपने अंगीकरण और परमेश्वर में अपने विश्वास पर आधारित जीवन जीता है?" और याकूब और पौलुस के लिए विश्वास को कर्म-सहित होना आवश्यक है। क्या मैं इसे फिर से कह सकता हूँ? विश्वास को कर्म-सहित होना आवश्यक है। इससे कुछ उत्पन्न होना चाहिए। यह दिखाई देना चाहिए। मौखिक विश्वास पर्याप्त नहीं है। मानसिक विश्वास अपर्याप्त है। विश्वास कार्य में प्रकट होना चाहिए। यह परीक्षाओं को सहन करता है, यह परमेश्वर के वचन का पालन करता है, यह कर्म करनेवालों को उत्पन्न करता है, यह किसी के प्रति पूर्वाग्रह नहीं रखता, यह जीभ को नियंत्रण में रखता है, यह बुद्धिमानी से कार्य करता है, यह शैतान का विरोध करने की सामर्थ्य प्रदान करता है, और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि यह प्रभु के आगमन की धीरज के साथ प्रतीक्षा करता है। और याकूब और पौलुस दोनों ने ठीक एक जैसी बात सिखाई है।
>
> — डॉ. लैरी जे. वाटर्स

उस तरीके को सुनिए जिसमें याकूब ने पद 2:15-17 में इस सिद्धांत को लागू किया :

> यदि कोई भाई या बहिन नंगे-उघाड़े हो और उन्हें प्रतिदिन भोजन की घटी हो, और तुम में से कोई उनसे कहे, "कुशल से जाओ, तुम गरम रहो और तृप्त रहो," पर जो वस्तुएँ देह के लिये आवश्यक हैं वह उन्हें न दे तो क्या लाभ? वैसे ही विश्वास भी, यदि कर्म सहित न हो तो अपने स्वभाव में मरा हुआ है (याकूब 2:15-17)।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

याकूब को अपनी बात इससे अधिक मजबूती से रखने को देखने की कल्पना करना कठिन होगा। उसके पाठकों को अपनी कलीसियाओं में व्याप्त अशांति को परमेश्वर की व्यवस्था के प्रति व्यावहारिक आज्ञाकारिता, विशेषकर एक दूसरे से प्रेम करने की आज्ञा को मानने के द्वारा संबोधित करने की आवश्यकता थी। उन्होंने अपने विश्वास के बारे में चाहे जैसे भी दावे किए हों, वे प्रेम के व्यावहारिक भले कार्यों के बिना परमेश्वर की दृष्टि में धर्मी नहीं ठहराए जा सकते।

उपसंहार

इस अध्याय में हमने याकूब की पत्री में ज्ञान के दो मार्गों को देखा है। हमने देखा कि कैसे याकूब ने अपने पाठकों की चिंतनशील ज्ञान की आवश्यकता को दर्शाने, उन्हें मार्गदर्शन प्रदान करने और चिंतनशील ज्ञान तथा विश्वास के बीच संबंध को स्थापित करने के द्वारा अपने पाठकों को चिंतनशील ज्ञान की ओर अग्रसर किया। और हमने यह भी देखा कि कैसे याकूब ने अपने पाठकों को उनकी आवश्यकता को दिखाने और परमेश्वर तथा उसके लोगों के प्रति विश्वासयोग्य, नम्र सेवा में परमेश्वर के सत्य को लागू करने में उनकी अगुवाई करने के द्वारा व्यावहारिक ज्ञान का अनुसरण करने का उन्हें निर्देश दिया।

याकूब ने पहली सदी के यहूदी मसीहियों को ज्ञान के दो मार्गों का अनुसरण करने को कहा। और आज आपके और मेरे लिए भी ऐसा ही होना चाहिए। हमें भी चिंतनशील और व्यावहारिक दोनों प्रकार के ज्ञान की आवश्यकता है। परमेश्वर से इन वरदानों को पाने के लिए हमें स्वयं को उस मार्गदर्शन के प्रति समर्पित करना चाहिए जो याकूब ने दिया। और हमें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि हम यह परमेश्वर के प्रति पूरे विश्वास और भक्ति में करें। ऐसे समय में जब हम आसानी से सांसारिक ज्ञान का अनुसरण करते हैं, तो हमें याकूब की पुस्तक को अपने हृदय में बसाना चाहिए और ज्ञान के उन मार्गों का अनुसरण करना चाहिए जो परमेश्वर की ओर से आते हैं।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।